International Journal of Applied Research 2020; 6(10): 811-814

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2020; 6(10): 811-814
www.allresearchjournal.com
Received: 19-08-2020
Accepted: 28-09-2020

डॉ. विमलेन्दु कुमार विमल
सहायक प्रध्यापकग्राम–सिरदिलपुर, पो0–पटोरी जिला–समस्तीपुर। बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. विमलेन्दु कुमार विमल
सहायक प्रध्यापकग्राम–सिरदिलपुर, पो0–पटोरी जिला–समस्तीपुर। बिहार, भारत

प्रगतिवादी–युग

डॉ. विमलेन्दु कुमार विमल

प्रस्तावनाः

आधुनिक युग में द्वितीय दशक 1930 ई. से लेकर 1940 ई. के बीच हिन्दी साहित्य में एक विशेष काव्य–धारा का प्रवाह मिलता है, जिसे प्रगतिवाद के नाम से जाना जाता है। इस साहित्य में प्राचीन सामाजिक रूढ़ियों, परंपराओं, धार्मिक मान्यताओं, आर्थिक परिस्थितियों आदि को रचना का विषय बनाया गया है और ऐसी सभी मान्यताओं के प्रति विरोध प्रदर्शित किया है जो या तो अनावश्यक या अवांछनीय प्रतीत हुए। आशय यह कि अंधविश्वासों, अत्याचारों, शोषणों आदि के वि☺ आवाज उठाना ही इस परंपरा के कवियों का लक्ष्य रहा। इसे ही प्रगति कहा गया और ऐसे साहित्य को प्रगतिवादी की संज्ञा से अभिहित किया गयां इस युग में ब्रहम–समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाओं ने समाज–सुधार का कार्य किया जिससे समाज–सुधार का कार्य किया जिससे समाज प्रगति की ओर अग्रसर कर सके। प्रगतिवाद पर मार्क्स के द्वंद्वारत्मक भौतिकवाद का प्रभाव पड़ा है। इसके अतिरिक्त प्रगतिवाद पर कुछ अन्य प्रभावों की भी बात कही जाती है। कुछ लोग इस पर फ्रायड के प्रकृतिवाद या अतियौनवाद का प्रभाव देखते हैं तो कुछ लो डार्विन के विकासवाद से भी इसे प्रभावित मानते हैं। कुछ ऐसे भी लोग है जो इस पर प्रगतिवाद आधिनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख वादों में अपना एक अलग ही सीान रखता है।

प्रगतिवाद के प्रमुख कवियों में केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, रांगेय राघव, शिवमंगल सिंह 'सुमन', त्रिलोचन, रामविलास शर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन कवियों ने यद्यपि अन्य विषयों पर भी कविताएँ लिखी हैं, तथापि अपनी रचनाओं में प्रेम के विविध रूपों की व्यंजना भी की है।

यों निराला के काव्य में भी प्रगतिवादी चेतना मिलती है। वे छायावाद से अधिक प्रगतिवाद के निकट हैं। इसी प्रकार पंत, दिनकर, नवीन, माखनलाल चतुर्वेदी, सोहनलाल द्विवेदी आदि की रचनाओं में भी प्रगतिवादी तत्वों के दर्शन किये जा सकते हैं।

जहाँ तक केदारनाथ अग्रवाल की बात है वे व्यापक सामाजिक चेतना के कवि हैं। उनकी रचनाओं में मार्क्सवादी विचारणा परिलक्षित होती हैं। अपनी कविताओं की विशेषता के संबंध में उन्होंने स्वयं भी कहा है–'मरी कविताओं में मेरा अनुभूत व्यक्तित्व तो है ही, साथ–ही–साथ उसमें युग–बोध और यथार्थ बोध भी है। प्रत्येक कविता आमन्वेषिणी होती हुई भी यथार्थान्वेषिणी भी है। एक ओर वह व्यक्तित्व में भरपूर डूबी हुई है, दूसरी ओर वह व्यक्त्वि से हटी हुई तटसि भी हैं। उसकी तटस्थता उसकी सिद्धि है और वही तटस्थता उसे मेरे व्यक्तित्व से बाहर, काव्य–क्ष्ज्ञेत्र में जीवित रखती है।(1) इनकी रचनाओं में प्रकृति–प्रेम, व्यक्ति–प्रेम और सामाजिक–प्रेम की भावना व्यंजित हुई है।

कवि की प्रकृति–प्रेम से बड़ी ही आत्मीयता है। वह अपना अलग संसार रचता दिखता है जिसमें गहरी जीवन–आस्था के दर्शन होते हैं। केदार की दृष्टि प्रकृति के साथ चलती है। गँवई प्रकृति के जिस सौंदर्य की सबने उपेक्षा की है, याहँ प्रकृति की मस्त वासंती हवा का एक चित दर्शनीय है –

'चढ़ी पेड़ महुआ, थपाथप मचाया/गिरी धम्प से फिर,
चढ़ी आम ऊपर/उसे भी झकोरा, किया कान में 'कू'।
उतरकर भगी मैं हर खेत पहुँची/वहाँ गेहुंओं में/लहर खूब मारी/
पहर दो पहर क्या, अनेकों पहर तक इसी में रही मैं।(2)

यहाँ ध्यातव्य है कि 'प्रकृति–चित्रों में जीवन की अभिव्यक्ति कवि केदार की निजी विशेषता है। ऐसा भी नहीं लगता कि कवि किसी वस्तु का आरोपण कर रहा है, बल्कि प्राकृतिक दृश्यों के विलक्षण सूक्ष्म निरीक्षण की अपनी क्षमता से वह ऐसे प्रसंगों की रचना करता है कि देखते ही बनता है।(3) यहाँ 'चन्द्र गहना से लौटती बेर' शीर्षक कविता में फसलों के स्वयंवर की एक झाँकी दर्शनीय है–

एक बीते के बराबर/यह हरा ठिंगना चना।
बाँधे मुरैठा शीश पर/छोटे गुलाबां फूल का।
सजकर खड़ा है/पास ही मिलकर उगी है।(4)

केदार की ऐसी अनेक कविताएँ हें जिनमें प्रकृति के एक से एक सुंदर चित्र उभरे हैं। केदार व्यक्ति–प्रेम का चित्र खींचने में भी काफी सिद्धस्त दिखाई देते हैं। उनकी कविताओं में प्रणय–संवेदना का आधिक्य है जो कवि की कैशोर मनोभावना का सहज परिणाम है। 'नींद के बादल' कविता–संग्रह की प्रायः रचनाएँ इसी प्रकार की हैं। यहाँ उनके द्वारा व्यक्ति–प्रेम ओर अतृप्त वासना के दर्शन होते हैं–

'और कंधों से तनिक नीचे उतरकर/वासना के हाथ से
अब तक अछूते औ' अदोलित/दो मृदुल दलदार
वृताकर कुच थे.../क्षीण कटि थी/पीन जाँघें...।
नग्न नारी प्राण प्यारी चुप खड़ी थी।(5)

केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में समाज–प्रेम की भावना भी व्यक्ति हुई है। कवि एक ऐसे नवीन समाजा का निर्माण करना चाहता है, जिसमें श्रमीतियों का हित हो सके और वे स्वतंत्रता का अनुभव कर सकें। ऐसे समाज की नवीन रचना के लिए कवि'मोरचे पर' कविता की इन पंक्तियों में कहता है–
मैं लड़ाई लड़ रहा हूँ मोरचे पर/रक्त की धारा बहाकर/किरकिराती रेत को भी उर्बरा मैं कर रहा हूँ। शब्द के कर्मण्य कर से जोत धरती/मानवी स्वाधीनता के बीज बोता जा रहा हूँ/और श्रमजीवी हितों के अंकुरों को मैं/उगाता जा रहा हूँ।'(6)

केदारनाथ अग्रवाल रचित 'न टूटों तुम', 'हम जियें न जियें दोस्त' आदि कविताओं में भी समाज–प्रेम की यही भावना दृष्टगोचर होती है।
प्रगतिवादी काव्य धारा के वि वैद्यनाथ मिश्र 'नार्गाजुन' की कविताओं में भी प्रेम के विभिन्न रूपों की व्यंजना हुई है। उनकी रचनाओं में वात्सल्य–प्रेम, समाज–प्रेम और राष्ट्र–प्रेम की भावना व्यंजित हुई है। यहाँ उनके द्वारा रचित 'गुलाबी–चिड़ियाँ' की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं। जिनमें वात्सल्य प्रेम की झाँकी देखी जा सकती है। यथा–
'अधेड़ उम्र का मुच्छड़ रोबीला चेहरा/आहिस्ते से बोला/हाँ साब लाख कहता हूँ नहीं मानती है मुनिया/टाँगे हुए हैं कई दिनों से अपनी अमानत/यहाँ अब्बा की नजरों के सामने/मैं भी सोचता हूँ/ क्या बिगाड़ती है चूड़ियाँ/ किस जुर्म पे हटा दूँ इनको यहाँ से?/...छलक रहा था दूधि या वात्सल्य। बड़ी–बड़ी आँखों में.../और मैंने झुककर कहा/हाँ भाई मैं भी पिता हूँ/वो तो बस यूँ ही पूछ लिया आपसे/वरना ये किसको नहीं भायँगी। नन्हीं कलाइयों की गुलाबी चूड़ियाँ/ इन पंक्तियों के अंतर्गत वात्सल्य प्रेम की बड़ी ही स्वाभाविक दयनीय स्थिति को देखकर वे बहुत अधिक दुःखी दिखाई पड़ते हैं। तभी तो विषमता, व्यंजना हुई है।
नागाजफन ने समाज–प्रेम से संबंधित कविताओं की भी रचना की है। भारत के शोषित समाज के प्रति उनके मन में बहुत अधिक सहानुभूति है। श्रमिकों की अन्याय और उत्पीड़न को समाप्त करने वाली शक्ति की गुहार में उनकी कविता निकलती रहती है। आम आदमी की तड़फड़ाती जिन्दगी ने उनके हृदय में तड़पन पैदा की है। वे आकुल–व्याकुल होकर एक सुखी–सम्पन्न नये समाज की रचना के लिए तत्पर दिखाई देते हैं। कवि को पूर्ण विश्वास है कि युवा–शक्ति ही सामाजिक समस्याओं का समाधान कर सकती है। 'मैं तुम्हें चुम्बन दूँगा...' कविता में कवि का यह विश्वास देखा जा सकता है–'मैं तुम्हारा ही पता लगाने के लिए/घूता फिर रहा हूँ/सारा–सारा दिन, सारी–सारी रात/आगामी युगों के मुक्ति सैनिक, कहाँ हो तुम/आओ सामने आओ बेटे/मैं तुम्हारा चुम्बन लूँगा/मैं तुम्हें अपना चुम्बन दूँगा।''(8)
नागार्जुन ने देश–प्रेम संबंधी कविताओं भी लिखी हैं। उन्होंने बड़े ही निर्भीक होकर 'आओ रानी, हम ढोयेंगे पालकी', 'काली माई', 'शासन की बंदूक', 'क्या हुआ आप को,' 'पता नहीं दिल्ली की देवी गोरी या काली', अब तो बंद करो हे देवि, यह चुनाव का प्रहसन' आदि कविताओं में देश की विडम्बनाओं पर खुलकर व्यंग्य किया है। जब इंदिरा गाँधी ने अपने षासन–काल में देश में आपात् स्थिति की घोषणा की थी और उस स्थिति से देश का दम घुट रहा था तो नागार्जुन ने बड़े ही निर्भीक भाव से प्रधानमंत्री पर व्यंग्य करते हुए कहा था–

इन्दु जी, इन्दु जी, क्या हुआ आपको,
सत्ता की मस्ती में भूल गयी बाप को।(9)

आपात्काल में जनता पर अनेक प्रकार के जुल्म ढाये गये, 'इन्क्रोचमेंट' के नाम पर बहुत–से मकान तोड़े गए, 'मीसा' के अंतर्गत बहुतेरे निर्दोष लोग भी गिरफ्तार किये गये। लोगों के मन में भय और आतंक उत्पन्न करने के लिए अनेक नये–नये हथकण्डे अपनाये गये। नेता, अफसर और कुछ साहित्यकार भी इंदिरा गाँधी की चमचागिरी करने लगे। ऐसी स्थिति में भी नागार्जुन ने निर्भीक होकर लिखा था–
'जली ठूँठ पर बैठकर, गयी कोकिला कूक'
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक।'(10)

इस प्रकार नागार्जुन की कविताओं में प्रेम के विभिन्न रूपों की व्यंजना की गयी है।
प्रगतिवादी कवि रांगेय राधव की रचनाओं में भी प्रेम की व्यंजना हुई है। उनकी रचनाओं में समाज–प्रेम, राष्ट्र–प्रेम और संपूर्ण मानवता के प्रति प्रेम की भावना मिलती है। उन्होंने अपनी आँखों किसानों और मजदूरों की दयनीय स्थिति का अवलोकन किया था। उनके अनुसार समाज की सारी विसंगियाँ मनुश्य के द्वारा ही उत्पन्न की गयी हैं और मनुष्य ही उनसे लड़ाई भी लड़ रहा है। इस संघर्षशील मनुष्य की विजय के प्रति कवि पूर्णतः आश्वस्त है। तभी तो वह कहता है–

'और अब इंसान/बर्बर प्रकृति का स्वामित्व करता।
बढ़ रहा है/ज्ञान के दीप अब प्रति देश से/
चलती जवानी/गीत उठता है नया/नव शक्ति की
जलती कहानी/और अब प्रति देश की संस्कृति।
बनती एक तोरण/सज रहे हैं नये बंदनवार।'(11)

रांगेय राघव ने 'पिघलते पत्थर', 'राह के दीपक' आदि कविता–संग्रह के अंतर्गत राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति दी है, जो उनके राष्ट्र–प्रेम का द्योतक है। रांगेय राघव मानवीय आस्था के कवि हैं। उनकी रचनाओं में जन–गण के कल्याण की भावना दृष्टिगोचर होती है। उनकी कविता 'वंदना' में मानव–प्रेम से संबंधित यह भावना देखी जा सकती है, यथा–

विश्व का प्रत्येक/उठे मानव दीप्तिमय...।
कर शक्ति–गर्जन.../स्वस्तिवाचन/मुक्तिगायन।
ज्ञान–पथ गतिमान/सारा विश्व हो द्युतिमान।(12)

श्रांगेय राघव साहित्य में प्रचलित मानवता से सहमत नहीं है। अपनी प्क्षधरता घोषित करते हुए वे प्रगतिवादी धारणा के आधार पर मानवतावाद की परिभाषा देते हैं। शिवमंगल सिंह 'सुमन' भी प्रगतिवादी काव्य धारा के एक सशक्त कवित हैं, जिन्होंने भी अपने काव्य प्रेम के विभिन्न रूपों को अभिव्यक्ति दी है। उनकी रचनाओं में वैयक्तिक प्रेम, समाज–प्रेम, संवहारा वर्ग के प्रति प्रेम

तथा मानवता के प्रति प्रेम–भावना व्यंजित हुई है। 'इन्दधनुश' कविता की इन पंक्तियों में उनके वैयक्तिक प्रेम की व्यंजना देखी जा सकती है–

प्रिय! तुम्हारे रूप–रंग/यौवन/सौंदर्य के सामने/
फीके लगते हैं वसंत के बहार/
पता नहीं वह प्रेम है या है कोई स्वर्गीय अमृत–धार।(13)

'सुमन' की रचनाओं में समाज–प्रे की व्यंजना सीान–सीान पर हुई हैं।'कविवर 'सुमन' एक नये समाज की रचना चाहते हैं। उनकी यह चाहना उनकी अनेक कविताओं में व्यक्त हुई है। पुराने मूल्य, रूढियाँ, जो समाज को कमजोर बना रही हैं तथा मानव के जीवन को कश्टमय कर रही हैं, उनकी समाप्ति कर अपनी कल्पना का समजा वे बनाना चाहते हैं। (14)
निम्नलिखित पंक्तियाँ में उनकी यह भावना व्यंजित हुई हैं –

'नव–भवन निर्माण हित में/ जर्जरित प्राचीनता का/
गढ़ ढहाना चाहता हूँ।(15)

कविवर 'सुमन' की रचनाओं में सर्वहारा वर्ग के प्रति भी प्रेम और सहानुभूति के स्वर सुनाई पड़ते हैं। सर्वहारा श्रमिकों के प्रति उनके भीतर पूर्ण सहानुभूति के दर्शन होते हैं। श्रमिकों की दयनीय दशा का एक चित्र यहाँ प्रस्तुत है जिसमें कंकड़ उनसे अपनी समता सिद्ध करता है– 'पर मैंने कल पथ पर देखी, परवलित मानवों की टोली,

थी जिनकी आह कराहों में, मेरी परवशता की बोली।
डनकी भी हाहाकारों पर, देता था कोई ध्यान नहीं,
अपने सूखें जर्जर तन में लगते थे मेरे हमजोली।(16)

सच्चा कवि अश्वयमेव मानवतावादी दृष्टिकोण रखता है। शिवमंगल सिंह 'सुमन' की कविताओं में भी मानवता के प्रति प्रेम की व्यंजना हुई है। कवि मानवता–विहीन धर्म को व्यर्थ बताता है। उसकी दृष्टि में वह धर्म अर्थहीन और बेकार है जिसमें मानवता समाज को दुर्बल और विकृत बना देती है। (17) ऐसे धर्म का विरोध करते हुए कवित का कथन है–

तन जलता है/मन जलता है/जलता जन धन जीवन/
एक नहीं जलते सदियों से/जकड़े गर्हित बंधन।' (18)

कवि ऐसे धर्म की सीापना चाहता है जो मानव–मानव के बीच प्रेम–संबंध बनाये रखने में सक्षम हो।
इस प्रकार शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में प्रेम के विविध रूपों की व्यंजना सफलतापूर्वक की गयी है।
कवि त्रिलोचन भी अपनी प्रेम–संबंधी, रचनाओं के लिए विशेश रूप से प्रसिद्ध हैं। उनकी रचनाओं में भी प्रेम के विभिन्न रूपों का चित्रण हुआ है।
त्रिलोचन धरती के कवि हैं। इसलिए उन्हें धरती से प्रेम है। उनकी अधिकतर कविताओं में धरती की सोंधी गंध है। उनके द्वारा लिखित 'सॉनेट' हिन्दी में काफी लोकप्रिय हैं। अपने 'सॉनेट' में वे छायावादी कविता का रोमानी संस्कार पूरी तरह नहीं छोड़ पाये हैं। फलतः उनकी कविताओं में उस रोमानियत की झलक दिखाई पड़ती है। कवि के हृदय में समाज–प्रेम की भावना भी उद्वेलित होती रहती है। वह प्रेम उनकी रचनाओं में निबद्ध दृष्टिगोचर होता है। वे शोषण–रहित समाज का निर्माण करने के लिए क्रांति का आह्वान करते हैं–

'तुम बढ़ो जिस तरह दीप्तज्वाल/कर दग्ध रूढ़ि
का अंतराल/साम्राज्यवाद, सामंतवाद और व्यक्तिवाद/
जो बाँध रहे गति जीवन की कर उन्हें नष्ट/तुम
सामाजिक स्वातंत्र्य साध्य को करो स्पष्ट/होवें स्वतंत्र
नारी नर/हो सामंजस्य अमलतर। (19)

ऊपर हमने त्रिलोचन के धरती–प्रेम की बात कही है। कवि को ग्राम्य–सौंदर्य बराबर आकर्षित करता रहा है। गाँव के सीवान का एक चित्र पंक्तियों में उकेरा गया है।

'सधन पीली/उर्म्मियों में/बौर/
हरियाली सलोनी/झूलती सरसों
प्रकम्पित वात से/अपरूप सुंदर
धूप सुंदर/धूप में/अपरूप सुदंर
सहज सुंदर।(20)

विचार कर देखने से लगता है कि 'प्रेम की छवियों के अंकन में त्रिलोचन का छायावादी संस्कार मुखर हो उठता है, लेकिन उसमें कहीं कोई वायवीय हलचल नहीं दिखाई देती। 'त्रिलोचन' के प्रेम में कोई मांसलता नहीं दिखती, वासना का कोई आभास नहीं होता। (21) यहाँ प्रेम के प्रथम परिचय का प्रभाव जरा देखा जाय जिसकी छवि का वाण कवि को पीड़ा में डूबता नहीं, बल्कि उसकी जड़ता को तोड़ देता है तथा जीवन के संघर्ष की ओर उन्मुख कर देता है–

'जड़ता है जीवन की पीड़ा/निस्तरंग पाषाणी क्रीड़ा/
तुमने अनजाने वह पीड़ा/छवि के शर से दूर भगा दी।(22)

इन पंक्तियों से विदित हेात है कि प्रेम कवि को 'व्यक्तिवादी और काल्पनिक न बनाकर उसे जीवन–जगत से जोड़ता है।
प्रगतिवादी कवि डॉ. रामविलास शर्मा ने भी प्रेम के विभिन्न आयामों का बड़ा ही सुंदर चित्र अपनी रचनाओं में उकेरा है। एक कुशल समीक्षक होते हुए भी उनकी कवित्व की अद्भुत प्रतिभा है। कवि को जहाँ भारतीय संस्कृति से प्रेम है, वहाँ उन्होंने समाज के प्रति भी प्रेम दर्शाया है। 'चाँदनी', 'प्रत्यूष के पूर्व', 'सिलहार', 'दिवा–स्वप्न', 'जल्लाद की मौत' आदि कविताओं में कवि का संस्कृति–प्रेम और समाज–प्रेम व्यंजित हुआ है। 'किसान कवि और उसका पुत्र' शीर्षक कविता के अंतर्गत किसानों के जीवन के प्रति प्रेम–भावना को व्यंजित करते हुए कवि कहता है–

'अंतर में यह व्यथा छिपाये रहना होगा।
काल रात्रि में चार प्रहर अविराम जागरण।
यही व्यथा का पुरस्कार है, अति साधारण।
लघु जीवन से अमर बनेगा बहु जन–जीवन। (23)

कवि को पूर्ण विश्वास है कि लघु जीवन से ही बहुजन के सुखमय भविष्य के द्वार खुल सकेंगे और समाज में नया परिवर्तन आयेगा।
प्रगतिवाद के प्रमुख कवियों में शील, महेन्द्र भटनागर, नरेश शर्मा, शंकर शैलेन्द्र आदि के भी नाम आते हैं और इन कवियों ने भी किसी–न–किसी रूप में अपने–अपने काव्यों में प्रेम की व्यंजना अवश्य की है।
ऊपर जिन कवियों के नाम गिनाये गये हैं, वे प्रगतिवाद की सीमा निर्धारित नहीं करते, बल्कि उसका प्रतिनिधित्व करते हैं।'प्रगतिवाद' तो एक काव्य–धारा है और काव्य–धारा की लहरों को गिन पाना संभव नहीं है।

स्ंदर्भ

1. केदारनाथ अग्रवाल–भूमिका, फूल नहीं, रंग बोलते हैं, पृ.सं. 4
2. डॉ. विमल स्वरूप–प्रगतिवाद के प्रमुख हस्ताक्षर, प्र.सं., पुस्तक महल, इलाहाबाद, पृ.सं. 21

3. सं. डॉ.त्रिभुवन सिंह–साहित्यिक निबंध, प्र.सं.,रत्ना पब्लिकेशन्स, वाराणसी, पृ.सं. 566
4. डॉ. सुशील कुमार श्रीवास्तव–केदारनाथ अग्रवाल की काव्य–दृष्टिःएक सर्वेक्षण, प्र.सं., राजहंस प्रिंटिंग प्रेस, पुणे, पृ. सं. 327
5. डॉ. सुशील कुमार श्रीवास्तव–केदारनाथ अग्रवाल की काव्य–दृष्टिः एक सर्वेक्षण, प्र.सं., राजहंस प्रिंटिंग प्रेस, पुणे, पृ.सं. 135
6. संपादक–डॉ. त्रिभुवन सिंह, साहित्यिक निबंध, पृ.सं. 568
7. संपादक–डॉ. त्रिभुवन सिंह, साहित्यिक निबंध, पृ.सं. 568
8. वही, पृ.सं. 570
9. संपादक–डॉ. त्रिभुवन सिंह, साहित्यिक निबंध, पृ.सं. 572
10. वही, पृ.सं. 572
11. सं. डॉ.त्रिभुवन सिंह–साहित्यिक निबंध, प्र.सं.,रत्ना पब्लिकेशन्स, वाराणसी, पृ.सं. 574
12. वही, पृ.सं. 574
13. सुधा, अगस्त 1956, वही, पृ.सं. 14
14. डॉ. त्रिभुवन सिंह, साहित्यिक निबंध, पृ.सं. 577
15. वही, पृ.सं. 577
16. वही, पृ.सं. 576
17. सं. डॉ. उपेन्द्र सेवक–आतंक, मासिक पत्रिका, फरवरी 1971, पृ.सं. 577
18. सं. डॉ. त्रिभुवन सिंह, साहित्यिक निबंध, पृ.सं. 577
19. डॉ. त्रिभुवन सिंह–साहित्यिक निबंध, तुषार क्रांति लिखित निबंध'प्रगतिवाद के प्रमुख हस्ताक्षर' पृ.सं. 578
20. डॉ. त्रिभुवन सिंह–साहित्यिक निबंध, तुषार क्रांति लिखित निबंध'प्रगतिवाद के प्रमुख हस्ताक्षर' पृ.सं. 578
21. वही, पृ.सं. 578
22. डॉ. बैधनाथ प्रसाद वर्मा–हिन्दी की प्रगतिवादी काव्यधारा, प्र. सं.टनिल प्रेस, अजीमाबाद, पृ.सं. 74
23. डॉ. बैधनाथ प्रसाद वर्मा–हिन्दी की प्रगतिवादी काव्यधारा, प्र. सं. टनिल प्रेस, अजीमाबाद, पृ.सं. 74